

परमेश्वर के चुने हुए कौन हैं?

धर्मविज्ञान के बारे में प्रश्न

सरल शब्दों में कहना, "परमेश्वर के चुने हुए" वे लोग हैं, जिन्हें परमेश्वर ने उद्धार के लिए पहले से ही ठहरा दिया है। उन्हें "चुने हुए" इसलिए कह कर पुकारा जाता है, क्योंकि यह शब्द चुनाव किए जाने की अवधारणा को सूचित करता है। भारत में प्रत्येक पाँच वर्षों के पश्चात्, हम एक राष्ट्रपति को "चुनते" हैं, अर्थात् हम एक व्यक्ति का चुनाव करते हैं, जो उस पद पर कार्य करेगा। यही अवधारणा परमेश्वर और उनके लिए कार्य करती है कि कौन बचाया जाएगा; परमेश्वर चुनता है कि कौन लोग बचाए जाएंगे। ये परमेश्वर के चुने हुए लोग हैं।

जैसा यह यह दृष्टिकोण है, उसके अनुसार परमेश्वर के चुने हुएों की अवधारणा में वे लोग आते हैं, जो बच जाएँगे, ये विवादास्पद विषय नहीं हैं। विवादास्पद विषय यह है कि कैसे और किस तरह से परमेश्वर उन्हें चुनता है, जिन्हें बचाया जाएगा। अभी तक की कलीसिया के इतिहास में चुने जाने (या पहले से ठहराए जाने) के सिद्धान्त के ऊपर दो मुख्य विचार पाए जाते हैं। एक दृष्टिकोण, जिसे हम भविष्य ज्ञान या पूर्वज्ञान का दृष्टिकोण कह कर पुकारते हैं, यह शिक्षा देता है कि अपने सर्वज्ञान के द्वारा परमेश्वर पहले से ही जानता है कि समय के चक्र में उसमें विश्वास करने और अपने उद्धार के लिए यीशु में भरोसा करने के लिए कौन अपनी स्वतन्त्र इच्छा का चुनाव करेगा। अपने ईश्वरीय पूर्वज्ञान के आधार पर परमेश्वर इन लोगों को "जगत

की उत्पत्ति से पहले" ही चुन लेता है (इफिसियों 1:4)। इस दृष्टिकोण को अमेरिका के अधिकांश इवेन्जेलिकल अर्थात् सुसमाचारवादियों के द्वारा माना जाता है।

दूसरा मुख्य दृष्टिकोण अगस्तीनवादी दृष्टिकोण है, जो अनिवार्य रूप से यह शिक्षा देता है कि परमेश्वर न केवल उन ही लोगों को अलौकिक रूप से चुनता है, जो यीशु मसीह पर विश्वास करेंगे, अपितु साथ ही उन लोगों को भी अलौकिक रूप से चुनता है, जिन्हें वह यीशु मसीह में विश्वास करने के लिए विश्वास प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में, मुक्ति के प्रति परमेश्वर का चुनाव किसी व्यक्ति के विश्वास के पूर्व ज्ञान पर आधारित नहीं है, अपितु यह सर्वसामर्थी परमेश्वर के स्वतन्त्र अनुग्रह पर आधारित है। परमेश्वर उद्धार के निमित्त लोगों को चुनता है, और समय के व्यतीत होने के साथ ही ये लोग मसीह में इसलिए विश्वास कर लेते हैं, क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें चुन लिया था।

इन दोनों में भिन्नता इस बात को लेकर है: परमेश्वर या मनुष्य — किस के पास उद्धार के लिए अन्तिम विकल्प है? पहले दृष्टिकोण में (पूर्वज्ञान के दृष्टिकोण में), इसके ऊपर मनुष्य का नियन्त्रण है; उसकी स्वतन्त्र इच्छा प्रभुता पाई हुई है और परमेश्वर के चुनाव में निर्णायक कारक बन जाती है। परमेश्वर यीशु मसीह के द्वारा उद्धार के मार्ग का प्रबन्ध कर सकता है, परन्तु मनुष्य को ही स्वयं के लिए मसीह का चुनाव करना होगा ताकि उसका उद्धार वास्तविक हो सके। अन्ततः यह दृष्टिकोण परमेश्वर को सामर्थ्यहीन बना देता

है और उसकी प्रभुता की महिमा की चोरी कर लेता है। यह दृष्टिकोण सृष्टिकर्ता को सृष्टि की दया पर छोड़ देता है कि यदि परमेश्वर लोगों को स्वर्ग में चाहता है, तो उसे यह अपेक्षा करनी चाहिए कि मनुष्य स्वतन्त्रता से उद्धार के लिए उसके मार्ग का चुनाव करेगा। वास्तविकता में चुने जाने का सर्वज्ञान वाला दृष्टिकोण चुने जाने वाला दृष्टिकोण बिल्कुल भी नहीं है, क्योंकि परमेश्वर वास्तव में चुनाव कर ही नहीं रहा है — वह तो केवल पुष्टि कर रहा है। यह मनुष्य ही है जो अन्ततः चुनने वाला है।

अगस्तीनवादी दृष्टिकोण में परमेश्वर का नियन्त्रण है; यह वही है, जो अपनी प्रभुता सम्पन्न इच्छा से उन्हें चुन लेता है, जिन्हें वह बचाएगा। वह न केवल उनको चुनता है, जिन्हें वह बचाएगा, अपितु वह उनके उद्धार को भी वास्तव में पूरा करता है। मात्र उद्धार को सम्भव बनाने की अपेक्षा, परमेश्वर उन्हें चुनता है, जिन्हें वह बचाएगा और तब वह उन्हें बचा लेता है। यह दृष्टिकोण परमेश्वर को उचित स्थान पर सृष्टिकर्ता और प्रभुता सम्पन्न परमेश्वर के रूप से रखता है।

अगस्तीनवादी दृष्टिकोण अपने आप में बिना किसी समस्या के नहीं है। आलोचकों ने यह दावा किया है कि यह दृष्टिकोण मनुष्य की स्वतन्त्र इच्छा को समाप्त कर देता है। यदि परमेश्वर उन्हें चुनता है जिन्हें वह बचाएगा, तब यह किस बात की भिन्नता को लाता है कि मनुष्य विश्वास करे या न करे? सुसमाचार का प्रचार क्यों किया जाए? इसके अतिरिक्त, यदि परमेश्वर चुने हुए लोगों को उसकी प्रभुता सम्पन्न इच्छा के अनुसार चुनता है, तब हम कैसे

हमारी गतिविधियों के लिए उत्तरदायी हुए? ये सभी अच्छे और सही प्रश्न हैं, जिनके उत्तरों को दिया जाना चाहिए। इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए रोमियों 9 एक अच्छा सन्दर्भ है, जो चुने हुएों के दृष्टिकोण में परमेश्वर की प्रभुता का अध्ययन गहनता के साथ करता है।

इस सन्दर्भ की पृष्ठभूमि रोमियों 8 में पाई जाती है, जो स्तुति के बड़े चरम के साथ अन्त होता है: "क्योंकि मैं निश्चय जानता हूँ... [न कोई] और सृष्टि हमें परमेश्वर के प्रेम से जो हमारे प्रभु यीशु मसीह में है, अलग कर सकेगी" (रोमियों 8:38-39)। यह बात पौलुस को इस विचार की ओर ले चलती है कि एक यहूदी कैसे इस कथन के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करेगा। जबकि यीशु इस्राएल की खोई हुई सन्तान के पास आया था और आरम्भिक कलीसिया व्यापक रूप से यहूदी लोगों से मिलकर बनी थी, सुसमाचार यहूदियों की अपेक्षा अधिक तेजी के साथ अन्यजातियों में विस्तारित हो रहा था। सच्चाई तो यह है कि अधिकांश यहूदियों ने सुसमाचार को एक ठोकर के रूप में देखा था (1 कुरिन्थियों 1:23) और यीशु को अस्वीकृत कर दिया था। यह बात एक सामान्य यहूदी को इस विचार की ओर ले चलती थी कि क्या परमेश्वर की चुने हुएों की योजना असफल हो गई थी, क्योंकि अधिकांश यहूदियों ने सुसमाचार के सन्देश को अस्वीकृत कर दिया था।

रोमियों 9 के पूरे अध्याय में पौलुस क्रमबद्ध तरीके से दिखाता है कि परमेश्वर का प्रभुता सम्पन्न चुनाव आरम्भ से ही कार्यरत् है। वह एक महत्वपूर्ण कथन को देते हुए आरम्भ करता है: "परन्तु यह नहीं कि परमेश्वर का वचन टल

गया, इसलिये कि जो इस्राएल के वंश हैं, वे सब इस्राएली नहीं हैं" (रोमियों 9:6)। इसका अर्थ यह है कि इस्राएल के सभी लोग जातिय रूप से (अर्थात्, अब्राहम, इसहाक और याकूब के वंशज) सच्चे इस्राएल (परमेश्वर के चुने हुए) से सम्बन्धित नहीं हैं। इस्राएल के इतिहास की समीक्षा करते हुए पौलुस यह दर्शाता है कि परमेश्वर ने इसहाक को इश्माएल और याकूब को एसाव के स्थान पर चुन लिया था। यदि कोई ऐसा सोचता है कि परमेश्वर इन लोगों का चुनाव उनके विश्वास या भले कार्यों के ऊपर आधारित हो कर रहा था, जो वे भविष्य में करेंगे, तो वह इसमें यह जोड़ता है, "और अभी न तो बालक [याकूब और एसाव] जन्मे थे, और न उन्होंने कुछ भला या बुरा किया था; इसलिए कि परमेश्वर की मनसा जो उसके चुन लेने के अनुसार है, कर्मों के कारण नहीं परन्तु बुलानेवाले के कारण है" (रोमियों 9:11)।

इस स्थान पर एक व्यक्ति परमेश्वर को अन्यायपूर्ण रीति से कार्य करने के आरोप लगाने की परीक्षा में पड़ सकता है। पौलुस इस आरोप का पूर्वानुमान वचन 14 में लगाते हुए स्पष्टता के साथ यह कहता है कि परमेश्वर ने किसी भी रीति से अन्यायपूर्ण रीति से कार्य नहीं किया है। "मैं जिस पर दया करना चाहूँ उस पर दया करूँगा, और जिस किसी पर कृपा करना चाहूँ उसी पर कृपा करूँगा" (रोमियों 9:15)। परमेश्वर उसकी सृष्टि के ऊपर सम्प्रभु है। वह जिसे चुनना चाहे उसे चुनने के लिए स्वतन्त्र है, और वह जिसे चाहे उसके ऊपर दया करने के लिए भी स्वतन्त्र है। सृष्टि के पास सृष्टिकर्ता के ऊपर अन्यायी होने का आरोप लगाने का कोई अधिकार नहीं है। यह सोच कि सृष्टि ही सृष्टिकर्ता पर आरोप लगाने के लिए उठ खड़ी हो सकती है, पौलुस के

लिए बेतुका है, और यही प्रत्येक मसीही विश्वासी के साथ भी होना चाहिए।
रोमन 9 का संतुलन इस बात की पुष्टि करता है।

जैसा कि पहले ही उल्लेखित कर दिया गया है, ऐसे और भी अन्य सन्दर्भ हैं, जो परमेश्वर के द्वारा चुने जाने के इस विषय के ऊपर निम्न स्तर में बात करते हैं (यूहन्ना 6:37-45 और इफिसियों 1:3-14, इत्यादि ऐसे ही कुछ सन्दर्भों हैं)। मुख्य बात यह है कि परमेश्वर ने उद्धार के लिए एक बचे हुए लोगों को छुटकारे के लिए पहले से ही ठहरा दिया है। इन चुने हुए लोगों को जगत की उत्पत्ति से पहले ही ठहरा दिया गया है, और उनका उद्धार मसीह में पूर्ण है। जैसा कि पौलुस कहता है, "क्योंकि जिन्हें उसने पहले से जान लिया है उन्हें पहले से ठहराया भी है कि उसके पुत्र के स्वरूप में हों, ताकि वह बहुत भाइयों में पहिलौठा ठहरे। फिर जिन्हें उसने पहले से ठहराया, उन्हें बुलाया भी; और जिन्हें बुलाया, उन्हें धर्मी भी ठहराया है, और जिन्हें धर्मी ठहराया, उन्हें महिमा भी दी है" (रोमियों 8:29-30)।

स्रोत / Source: <https://www.gotquestions.org/Hindi/Hindi-elect-of-God.html> | English: <https://www.gotquestions.org/elect-of-God.html>

www.GotQuestions.org · <https://www.gotquestions.org/Hindi> · © Copyright
Got Questions Ministries · questions@gotquestions.org